साहब बीबी गुलाम



पूर्वाभास

इधर बहूबाज़ार स्ट्रीट और उधर सेण्ट्रल एवेन्यू। बीच की साँप जैसी आँकी बाँकी गली आज तक इन दो राजपथों को मिलाने का काम करती रही। अब वैसा मुमकिन न रहा शायद। लगता है, रातों रात यह वनमाली सरकार लेन गायब हो गई। इतनी पुरानी गली। इसी के पश्चिम गोविन्दपुर और सूतानूटी के समय से वनमाली सरकार के पुरखे राज कर गए थे। कहावत-सी चल पड़ी थी, उमीचाँद की दाढ़ी और वनमाली सरकार की 'बाड़ी'। रोब दाब और बहार, शायद दोनों ही की एक-सी थी। उस जमाने में सद्गोप वनमाली सरकार को ईस्ट इण्डिया कम्पनी से पटने की दीवानी मिली थी और कलकत्ते में मिला था कम्पनी के मातहत व्यापार करने का अधिकार। बहुत-बहुत पहले की हैं ये बातें। तब की जो कुम्हारटोली थी, उसमें उन्होंने लाट साहब के मुकाबले का एक मकान बनवाया। उनकी देखा देखी निमतल्ले में एक मकान बनवाया, उस समय के दूसरे एक बड़े आदमी मथुर सेन ने। मगर कहाँ वनमाली सरकार का मकान और कहाँ वह! कोई मुकाबला नहीं। उसके बाद कहाँ तो गया कुम्हारटोली का वह मकान, कहाँ गए खुद वनमाली सरकार और कहाँ गए मथुरसेन! सच ही, हैरान रह जाना पड़ता है सोचकर। वे आरमेनियन सौदागर कहाँ चले गए, जो सूत और नूटी का व्यापार करते थे! और कहाँ गये जाब चानक के उत्तराधिकारी अंग्रेज, जिन्होंने पुर्तगीज़ों के डर से कालीकट से भागकर सूतानूटी में पनाह ली थी, और बाद में जिन्होंने

कालीकट की नकल पर सूतानूटी का नाम रखा था कलकटा। आज तो सिर्फ कम्पनी के सिरिश्ते के कागजात पुराने कागज पत्तर में मुश्किल से ढूंढकर निकालना पड़ता है सूतानूटी का नाम। फिर भी वनमाली सरकार इतने दिनों तक उस गली में सांस रोके ज़िन्दा जो रह सके सो महज़ कलकत्ता कारपोरेशन की मेहरबानी से। अब वह भी गया। गोविन्द राम उमीचान्द हुजरीमल नकूधर जगत् सेठ और मथुर सेन के साथ अब इतिहास के पन्नों में एकबारगी खो गए वनमाली सरकार भी। आधा तो सेण्ट्रल एवेन्यू बनते वक्त पहले ही जा चुका था रहा सहा आधा भी खत्म!

जिम्मेदारी इम्प्रूवमेण्ट ट्रस्ट को सौंपी गई। गली में घुसते ही पछाहीं भड़भूजे का काठा—मिट्टी की दीवार टिन की छौनी। होली के महीना भर पहले से हो नाओं की झनकार के साथ रामा हो रामा की गूंज। उसके बाद नाक की सीध में पूरब को बढ़िए। ज़रा दूर जाकर बाएँ, फिर दाएं को मुड़िए। सद्‌गोप वनमाली सरकार की अक्ल जैसी पेचीली थी वैसी ही उनके नाम की यह गली भी बेतरह ऐंठती हुई जाकर बहूबाजार से मिली है। गली में दाखिल होते ही लगता, सामने की दीवार तक ही गई है यह। लेकिन हिम्मत बटोरकर बढ़ चलिए तो बहुत मज़े हैं। कम ऊंचे मकानों के जो कमरे सड़क की तरफ पड़ते हैं उनमें सजी बनी दूकानें। माड़ों पर ज्यादातर सोने चाँदी की दूकानें। बगल के एक मंजिला मकान के भीतर पर इण्डिया टेलरिंग हाल। थोड़ी ही दूर चलकर बाएं बाजू राष्ट्रीय झण्डेवाला साइनबोर्ड—प्रभास बाबू का पवित्र खादी भण्डार। उसके भी आगे गुरुपदों का स्वदेशी बाजार। जब वहाँ खरीदारों की बेतरह भीड़ हो जाती तो लोग बाग पास के सबुज संघ' के दरवाजे तक पहुंच जाते। कभी कभी सबुज संघ रोशनी और सजावट से जीवन्त हो उठता। कोई मौका भर मिल जाना चाहिए। फिर मुहल्ले वालों को नींद कहाँ नसीब! सुबह से शाम तक सबुज संघ की जय-जयकार के सिवा दुनिया में और घटना ही नहीं घटती कोई। लोग दफ्तर नहीं जाते, हाट-बाजार नहीं जाते खाते नहीं खाते नहीं, बस सबुज संघ और सबुज संघ। लेकिन उसके बाद ही पड़ता है ज्योतिषार्णव श्रीमद्

अनन्त भट्टाचार्य का 'श्रीमहाकाली आश्रम', जहाँ इस घोर कलिकाल के मिलावट के जमाने में भी एक असली नवग्रह कवच सिर्फ तेरह रुपये साढ़े पन्द्रह आने में मिलता है—डाक महसूल अलग। सत्य, त्रेता, द्वापर—वर्तमान, भूत, भविष्यत्—इस त्रिकालदर्शी राजज्योतिषी का बनाया हुआ वशीकरण बगलामुखी और धनदा कवच इंगलैंड अमरीका, अफ्रीका, चीन जापान, मलाया सिंगापुर जैसे सुदूर देशों तक जाता है। श्री श्री-महाकाली आश्रम की अन्यान्य विशेषताएं लाल नीली और पीली स्याही से विस्तारपूर्वक साइनबोर्ड पर लिखी हुई हैं। इसके बाद उस टिनशेड मकान के सामने छज्जे के नीचे है बाछा की पकौड़ी की दूकान। अगल बगल के चार पाँच मुहल्लों में उसकी पकौड़ी की शोहरत है। तीन पुश्त से दूकान। बाछा अब नहीं रहा। उसका बेटा अधर। अधर का बेटा अक्रूर अब दूकान पर बैठता है। अक्रूर कारीगर खासा है। मिट्टी के एक बर्तन में बेसन रखकर बाएं हाथ से उसमें थोड़ा सा सोडा मिलाकर ऐसे ढंग से मिलाता है कि गरम तेल के कड़ाह में डालते ही पकौड़ियाँ फाले सी फूल उठती हैं। हथकट्टा कलुआ सुबह से ही आ बैठता। उसकी दूकान भी खुली न होती। जाड़े के दिनों में सुबह ही लोगों की भीड़ लग जाती। अक्रूर पकौड़ियाँ छान छानकर टोकरी में रखता जाता। बाज बाज वक्त टोकरी में रखने की भी नौबत न आती। जीभ में फफोला पड़ने की नौबत! बारह बजे तक यही हाल। ऐसी ही और भी कितनी दूकानें बाईं तरफ। और इस तरह वह टेढ़ी मेढ़ी गली बहूबाजार स्ट्रीट से जा जा मिली है। दूकान दूकान, जितना जो कुछ भी है सब बाईं तरफ, लेकिन दाईं तरफ आर से छोर तक बस एक ही मकान, कबूतर के दरबे से छोटे मकर कमरे। किरायेदारों की ठसाठस से कालनेमि के लंका जैसा हाल! तिल धरने की जगह नहीं। लोग कहा करते थे बड़ा महल। उस जमाने में इधर उतना बड़ा मकान दूसरा था भी नहीं! बालू के पलस्तर पर चूने की पोताई से जब तक चलाया जा सका चला। उसके बाद हाल से बाहर के चार पाँच कमरों में कायम हुआ था नननल स्कूल। एक कमरे में बहुत पहले से ही बरघे बिछाये गए थे। तमाम दिन घट घट घड़ियाल की टन् टन् आवाज होती रहती। टिफिन के समय लेमनचूस

और पापड़ी के फेरीवाले घंटी टुनटुनाकर लड़कों का ध्यान खींचा करते। कभी किसी दिन किसी किरायेदार की बैठक में गाने-बजाने का समाँ। तानपूरे के अटूट सुर के साथ तबले पर कहरवा का रेला। 'पिया आवत नहीं' के साथ मीठे हाथ के तबले की तिहाई से मुहल्ला मात! कभी कभी 'मिया की मल्हार' के साथ तबले के मीठे ठेके से खिंचकर रास्ते पर रसिक लोग रुक जाया करते उझक मौके खिड़की में से। कभी जो मालिक थे भाग्य के फेर में वही आज हो गए थे किरायेदार। फिर भी बड़े महल के अन्दर कदम रखने की किसी की हिम्मत नहीं होती। फ्राक पहने कोई लड़की लपककर कभी बाहर आ जाती और कपूर की दूकान से पकौड़े का दोना लेकर झटपट उसी दरबे में धँस जाती। कभी किसी राहगीर पर साग भाजी के छिलके आ गिरते कोठे पर से, गोया फूल बरसते हों। वह बेचारा बेवकूफ की तरह ऊपर को निगाह उठाता, मगर कहाँ कोई! एक तरफ की रसोई से मछली और प्याज की बू व्यंग्य सी आती, तो दूसरी से आती विजय की घोषणा-सी मांस और गरम मसाले की गंध। एक दरवाज़े पर आ लगी एक टैक्सी, औरतें सिनेमा जाएँगी। ठीक इसी वक्त दूसरे दरवाज़े पर आ लगी एक टुटही बग्घी, औरतें प्रसूति-सदन जाएँगी। जन्म मरण संगम का यह लीला विलास साठ सत्तर अस्सी सौ साल पहले जाने कब से आभिजात्य के तेज़ प्रवाह में इस मुहल्ले में शुरू हुआ था और इन कई सालों के अरसे में वह निहायत मध्यवित्त कगारे में बहने लगा।

हो चाहे मध्यवित्त—उस ज़माने की जोड़ी चार घोड़े की गाड़ी, लैंडो लण्डालेट फिटन और ब्रूहम न हो न सही बला से न रही पर्देदार पालकी तगर की साड़ीवाली नौकरानी, या सुनहले रुपहले कमरबन्दवाले चोबदार दरबिया हुक्काबरदार और खानसामे चालीस डाँड़ोंवाली मयूरपंखी नाव भी न हो हुई नसीब सवारी, न सही मछली प्याज पोई का साग माथे के ऊपर एक छत की छाँव और सुनिरा में पोषित बहू तो थी। अब तो वह भी नदारद। अब खड़ा हो तो कहाँ?

समय पर इम्प्रूवमेण्ट ट्रस्ट का नोटिस जा धमका।

बाज़ार की पड़ोसी दूकान में ज़ोरदार चर्चा चल पड़ी। चर्चा

चल पड़ी इण्डिया टर्लिंग हाल में। मुखर्जी दा के 'स्वदेशी बाजार' के सामने, प्रभास बाबू के 'पवित्र खादी भण्डार' के बाहर भीतर। त्रिकाल दर्शी श्रीमान् अनन्तहरि भट्टाचार्य के श्री श्रीमहाकाली आश्रम में भी आलोचना होने लगी। ज्योतिषार्णव बोले—अगले माह कर्कट राशि में राहु का प्रवेश है, मामला बड़ा टेढ़ा है देश पर राज रोष। महल्ले में भी तरह-तरह की बातें होने लगीं। इसमें तो भूकम्प बत्तर था, बत्तर क्या इससे सन् १७३८ का आँधी पानी जिसमें गंगा का पानी चालीस फुट उठ गया था। बड़ा भी था क्या उस ही बार! बड़े महल में जा बड़े-बूढ़े हैं, वे उन दिनों की बात जानते हैं। उस समय तुम लोगों की पैदाइश ही नहीं हुई थी भाई! और मेरा भी तब जन्म हुआ था क्या, या मेरे दादा ही पैदा हुए थे! यह देश आज का है? कितनी सदी पहले की बात है जानें! तब गंगा पद्मा से थोड़े ही मिली थी। वह नदिया और त्रिवेणी होकर सागर में जाकर मिलती थी। चितला के पास से एक पतला-सा पनाला बहते देखते हो न आदिगंगा वही थी लोग उसी को बूढ़ी गंगा कहते थे। बाद में जब भागी गंगा से आ मिली तो धारा टूट गई। भगीरथ की उसी गंगा को तुम लोग हुगली कहते हो, हम लोग कहते हैं भागीरथी। तब किसे पता था हुगली का, और कौन जानता था कलकत्ता! प्लिनि साहब के जमाने से लगा तो सिर्फ सप्तग्राम के पास की नदी को ही देवी सुरेश्वरी गंगे कहते थे! उसके बाद समय के चढ़ाव उतार के अटूट नियम से जिस रोज सतगाँव का पतन हुआ सामने आया हुगली, उसी रोज पुर्तगीजों की कृपा से भागीरथी का नाम हुआ हुगली।

किस्सा कहते हुए बूढ़े हाँफ उठते। कहते, पढ़ा नहीं?

> अजब शहर कलकत्ता
> रंडी, बाड़ी, जोड़ी, गाड़ी, झूठ बात अलबत्ता
> (यहाँ) जलते उपले, हँसता गागर, बलिहारी एकता
> बगुले बिल्ली ब्रह्मणियानी, बदमाशी का सत्ता।

चूड़ामणि चौधरी अलीपुर के वकील थे। बोले—अरे भाई किपलिंग साहब ही तो लिख गए हैं—

Thus from the midday halt of Charnock

Grew a city
Chance directed chance erected laid and
Built
On the silt
Palace byre hovel poverty and pride
Side by side

महल के इन नये मालिकों को उन दिनों की कद्र भी नहीं मालूम। वारेन हेस्टिंग्स तो हम लोगों की तरह गुड़गुड़ी पिया करता था। सुनते हैं चोट की चिट्ठी में खास तौर से लिखा रहता था 'कृपा करके हुक्काबरदार के सिवा दूसरा नौकर साथ लाने का कष्ट न उठाएँ।' और वह जाब चार्नक? बैठकखाने के उस बड़े बरगद के नीचे बैठकर हुक्का पीता था, अड्डा जमाता था और शाम होते ही चार डांड़ के बजरे से बैरकपुर भाग जाता था। और तो और एक ब्राह्मण की बेटी से शादी ही कर ली! सबसे पहिले कलकत्ता गोविन्दपुर और सूतानुटी में बसने का मौका मिला। पर दिन जो थमके पुर्तगीज। अब उन्हें मुरगीहाटा में देख पाओगे—आधा अंग्रेज आधा पुर्तगीज। नाम पड़ा था फिरंगी। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शुरू के किरानी वही लोग थे। जंजीर में बंधे हुए आकर अंग्रेज के चपरासी, खानसामा और उनकी बीवियाँ बना सबकी आया। फिर आये आरमेनियन। उनमें से कुछ खुरासान काबुल के रास्ते होकर दिल्ली आये थे। कोई कोई आये गुजरात सूरत बनारस बिहार होकर। उसके बाद डच लोग तब के चुचड़ा रहे। अन्त में आये कलकत्ता। उनके साथ आये ग्रीक, आये यहूदी, आये हिन्दू मुसलमान सब जात।

इस तरह बसा कलकत्ता। यह बात सन् १६६० की है।

दबदबा, शानशौकत, पठान और मराठों का जमाना गुजर गया। एक सुबह को नींद टूटी तो आँख खुली तो देखा इन्द्रप्रस्थ और दिल्ली जाने कहाँ गुम हो गई। उसकी जगह सुन्दरवन की दलदल में एक और ही आदमी ने सिर उठाया। जादू हो गया। कलकत्ता की बात में राज बनता है राज बिगड़ता है। जिन्दगी में तरक्की के लिए यहाँ आना पड़ता है। बीमारी में इलाज कराना हो तो यहीं आना पड़ता है।

पाप म गक होन के लिए यहाँ आना पडता है। महाराजा और भिख मगा होन के लिए यहाँ आना पडता है। इसीलिए सूतानुटी पहुँचे रायार राजवल्लभ बहादुर। दीवान रामचरण और दीवान गगागोविन्द सिंह पहुँच। फिर पहुँचे वारेन हेस्टिंग्स के दीवान कान्त बाबू हॉलवेल के दीवान दवनारायण ठाकुर, कलकत्ता के दीवान गोविन्दराम मित्र उमीचाँद और वनमाली सरकार। सरकार, यानी जिनके नाम की गली म बैठकर हम बाते कर रह है।

चूडामणि चौधरी का मुवक्किल नहीं जुटते। काले कोट पर काफी कालिख पड चुकी है—समय की और उम्र की। हाथ म स्याही लगी कि कोट म पोछ डालते, पता ही नहीं चलता। कचहरी जाते हैं। काडे जिल्द चाट गए है पुरानी की उन किताबों के पन्ने पलटते। भई, तुम लोग तो खास मजे म हो। खाते पीते और सिनेमा देखते हो। उन दिनों सिर उठाकर चौरंगी म चलने की मजाल भी थी किसी की? बूट की ठोकर स बच जाओ तो पिता का पुण्य समझो। तब की कहूँ—साहब रास्ते से जा रहा है। हाथ म है बेंत। दोनों तरफ से नेटिवो को मारता जा रहा है। गोया सब भेड बकरी हो। और मार पर नजर पडी नहीं कि हम सलाम ठोक हाथ दूर। विवेक कहाँ उनके! आखिर नेटिव क्या आदमी नहीं? भैया, रेल के तीसरे दर्जे के डिब्बे म पाखाना नहीं था। नागपुर से आसनसोल तक आया पेट दबाए। एक दाना मुँह म नहीं डाला, एक बूँद पानी नहीं, कहीं

सो चाहे जो भी हो इसम इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट को नोटिस जारी करन म क्या रुकावट! बडे महल के छोटे मालिकों न नोटिस लिया।

इधर नोटिस आया और उधर आ धमकी जंजीर कपास, सब्बल, छेनी, हथौडा, फावडा डिनामाइट कुली मजूर, लोग लश्कर। इन सबके साथ आया भूतनाथ, ओवरसियर, भूतनाथ भूतनाथ चक्रवर्ती—मुकाम नदिया, गाँव फतेपुर डाकखाना गाजना।

दोपहर को उडता गर्द का पहाड। टिन के छप्परों को उजाडने मे वक्त भी क्या लगता! भडभूजे की दुकान से लेकर सातुज मध वाला मकान ढहा दिया जा चुका। सर्दियों के दिन। शाम को रस्से का छोर

शाम मजूर शोर करते—

मरद जवान
हैया
शाबाश जवान
हैया
पूरी गरम
हैया

लेकिन गरम पूरियाँ वे नहीं खाते । दोपहर को खाने के लिए घण्टे भर की छुट्टी होती । सत्तू, हरी मिर्च और गुड़ का होता कलेवा उनका । बहू-बाजार स्ट्रीट में ट्राम की घड़घड़ उस समय क्षीण हो आती और उधर सेण्ट्रल एवेन्यू में उतर आती अलसाई थकावट । श्री श्रीमहाकाली आश्रम के पीपल के नीचे ज़रा लेट लगा लेते सब । बनमाली सरकार लेन की साँप जैसी शक्ल सीधी हो आई। टूटे मकान की समतल ज़मीन पर खड़े होकर मजूर गाते भी नहीं समझ पाते कि किस गज़ल की चोट में ज़िन्दगी के किस पर्दे का कौनसा सुर खामोश हो गया । एक एक ईंट मानो एक एक कंकाल हो । टूटी ईंट के साथ इतिहास का एक एक पन्ना चकनाचूर हो जाता और उनकी हवा में उड़कर आसमान को रंग देता ।

कचहरी से लौटते हुए चूड़ामणि चौधरी पलटकर ग़ौर करते । लगता आसमान लाल हो उठा है । ट्राम पर अगल बगल बैठे रहते दूसरे मुसाफिर भी मुँह बन्द रखते । घर लौटकर पलटने लगते इतिहास के पन्ने । वहीं, कभी सिराजुद्दौला ने शहर को फूँक डाला था । देखते ही देखते फिर कलकत्ता नये सिर से बस गया । वह कलकत्ता मानो नये सिरे से बसने के लिए आज फिर उजड़ रहा है । अच्छा ही हुआ । बेतरह ज़हर जम गया था यहाँ । कमरों में धूप और हवा को घुसने की राह न थी । परम्परा से बड़े शहर की वह दशा हो गई थी कि मालदारों का पास पास रहना मुश्किल । उस राज का तो शान है चाँदी का कोई बर्तन या पहलू का । उसी के लिए मुकदमे की नौबत आ गई । आज के इन लड़कों ने उस समय को देखा कहाँ ? चूड़ामणि चौधरी भी निहायत बच्चे थे । मझली चाची की

गुडिया के ब्याह मे फ्रास से मोती के जेवर आए थे। मँझले बाबू के कबूतर के लिए ठनठनिया के दत्त लोगो से हो गया मुकदमा। मुकदमा तो मुकदमा तीन साल तक चला। उस समय की बहुत बडी गायिका थी वज्जन बाई। होली के दिन गाने आई थी। तबले पर सगत की थी व्रज दास बाबू ने। उस समय बडा की बैठक म छोटा को जाने की इजाजत न थी। दफ्तर के किवाड की फाक म से झाँक झाँककर देखा था। नाच का क्या कहना! दस साल बाद वही वज्जन बाई फिर एक बार आई थी। रूप हवा हो चुका था। मँझली चाची स कुछ माँग ले गई थी। बहुत कहने सुनन पर गाया। वही गीत जो दस साल पहले सुना गई थी।

बाजूबन्द खुल खुल जाय

भरवी के व मोड बडे ही मीठे लग थ। बुढिया क गले मे तब भी जस जादू भरा हो। ठुमरी की तो माहिर थी वज्जन बाई। आज के लडको को यह गीत कहाँ नसीब!

कचहरी जाते जाते ट्राम के झरोखे से उस घर का दिखा उजाड। एक तरफ का सब ताना जा चुका था। महल का अभी हाथ नहीं लगाया था, इधर साफ-सुथरा करके उधर। चूडामणि के जी म आता, अभी भी कुछ है। आँखें बन्द करते ही उजड मानो सभी दिखाई पडता। यह था लगी डेवढी पर पालकी। मँझली चाची का दुलारी दाई गिरि स्वामी थान पहन आ खडी हुई। गिरिजासिंह ने सदर फाटक पर घण्टा बजा दिया—हटो, हटो, पालकी आ रही है। छोटा हो चाहे बडा, सभी योग म मँझली चाची का गगा स्नान जरूरी है। उसके बाद जो म आया ठीक ही हुआ। बडे महल म एक भी नौकर न रहा। बडे बाबू का खास नौकर था मधुसूदन, सभी नौकरो का सरदार। दगे के दिनो वह भी एक दिन अपने घर गया और गया सो गया।

चूडामणि ने आँखें जब खोली, तो ट्राम हाथीबगान के पास से गुजर रही थी। भीड पतली हो आई थी। अपने काले कोट की जेबो म दोनों हाथ डालकर व चुप बैठे रहे और सोचने लगे, घर पहुँचकर कोटन साहब वाला इतिहास पढना है और बसटीड की किताब, सर फिलिप फ्रांसिस म मदेम ग्रैंड की प्रेम-कहानी। क्या मौज उडा गए है ये! सात समन्दर

पार से आये जाब चानक और उनके छः सहकारी। साथ में सिफ तीस सनिक। अकबर बादशाह भी स्वाब म इतनी बडी सल्तनत की नहीं सोच सके थ।

पीतल की जूठी थालियाँ को धो पोछकर मजूर फिर इंट तोडने लगे। घण्ण धुप्प ! चूना सुरखी की बुकनी उडने लगी ऊपर। गद से भर जान लगा चेहरा आँखें। ठेकेदार का आदमी फिर भी कडी निगाह रखना। आखों म धूल न झोंक कोई। साहब कम्पनी न बनाया यह शहर बनाई सडकें। बडे बडे तालाब खुदवाए। नल लगवाए। सिर के ऊपर जलते हैं बिजली के लट्टू, घूमते हैं पंखे। सबकुछ साहब कम्पनी ने दिया है। इस बनमाली सरकार लेन को तोडकर भी वह देश का कोई उपकार जरूर करेगी। कौन जाने !

सलाम हुजूर—कहकर बैजू खिसककर खडा हो गया।

सलाम हुजूर—मुस्तैद सब्बल की चोट रोककर दुगमोचन भी अदब से खडा हो गया।

हर कदम पर सलाम लेता हुआ चलने लगा भूतनाथ। भूतनाथ चक्रवर्ती। वह सीधे महल के सदर दरवाज़े पर जा खडा हुआ।

कुलियों का सरदार चरित्तर मंडल सामने आया और उसने झुककर सलाम बजाया।

भूतनाथ ने सिर नवाया, पूछा—निशान तक हो गया चरित्तर ?

चरित्तर ने सिर हिलाया—आज बडा निशान लगाना होगा हुजूर ! कल और भी चालीस मजदूर बढा रहा हूं। उधर का काम तो खतम कर दिया। शाम तक सब बराबर करके ही छुट्टी मिलेगी।

भूतनाथ न एक बार चारों तरफ निगाह फलाकर देखा। बहुत दिन पहले ही सब मिट चला था। जितना कुछ बचा खुचा है अब उसको भी मेट डालना है। इस खानदान में जाने कहाँ जाने कब सनीचर की तरह कोई अभिशाप घुस गया था चुपचाप, अब जाकर अंत हुआ उसका।

चरित्तर ने फिर पूछा—तो कल उस निशान पर हाथ लगाएँगे हुजूर ?

कभी इसी मकान में आश्रय पाकर भूतनाथ ने अपने को धन्य समझा

घड और भी तीखी हो उठी। राहों पर दमक उठीं बत्तियाँ। मगर वन-माली सरकार लेन मे अब से न जलेगी रोशनी। लोग नहीं चलेंगे। और इतिहास से वनमाली सरकार का नामोनिशान मिट जाएगा।

वनमाली सरकार के साथ-साथ इस घर का इतिहास भी तो खो जाएगा। जी मे यह बात आते ही भूतनाथ कैसा बेबस सा हो गया। फिर अगल-बगल चौकन्नी निगाह डालकर, झट से सदर दरवाजे होकर अन्दर घुस पडा। कोई यहाँ नही। उसे देखेगा ही कौन ? लेकिन कोई देख ही ले तो उसे शायद पागल समझे। घडीघर के पास अपनी साइकिल टिकाकर वह सीधा बढ चला।

खूब याद है उस समय इसी घडीघर के घण्टे पर इस घर का सारा कारोबार चलता था।

सुबह छ बजे एक घण्टा बजता। ब्रजराखाल उससे भी पहले उठ बैठता। उस वक्त तक उसकी नित्य क्रियाएँ खतम हो चुकी होती। उस समय तक वह पत्थर के बरतन मे भिगोये चने नमक और अदरक के साथ बैठा-बैठा चबाता होता। बार-बार ताकीद करता—भई भूतनाथ, उठो उठो।

अँगडाई लेकर उठ बैठने म भूतनाथ को देर ही हो जाती। अस्तवल मे घास की मलाई की आवाज तब भी आती होती—छप छप हिस् हिस् कल्प् कल्प। उधर दरबान बिरिजसिंह और नरसिंह की तरफ से डण्ड बैठक की आती हुम् हुम् आवाज। सामने सीमेण्ट के आँगने से दासू जमादार के बुहारू की खरखराहट। इन सबसे मालूम पड जाता कि सवेरा हो गया। आँखें बन्द किये अब क्या पड़े रहना! डेवढ़ी को पार करके भूतनाथ और आगे बढ गया।

बाइं तरफ के इस कमरे मे रहता था इब्राहीम। उसकी गलपट्टा दाढी की भूतनाथ को आज भी याद आती है। छत क बरामदे म लकडी की कघी लिये खानसामा साईस इब्राहीम ने बाल जो झाड रहा है सो झाड ही रहा है। इब्राहीम के मन लायक होता ही नहीं। हाथ के आईने में सिर झुकाए इब्राहीम अपने बालों की बहार देखने मे मगन। किसी बात का खयाल नहीं। फिर एकाएक वह उठ खडा होता। उठ

खडा होता यानी बाल मन लायक सँवारा गया। उसके बाद कुंघी लेकर वह अपनी पठानी दाढी ठीक करने लगता। सुबह के सात बजे तक चलता यह क्रम।

भूतनाथ और आगे बढा। ओवरसियर भूतनाथ की आँखो के आगे मानो इतिहास का सिंहद्वार खुलने लगा। साँझ हो आई। लेकिन वह चालीस पचास, साठ सत्तर मो डेढसौ साल पीछे को निकल गया मानो। काल का रथचक्र जैसे घूमने लगा। अठारहवी सदी के मुर्शीदकुली खा के कानूनगो के खानदान का आखिरी चिराग बद्रीबाबू मानो सामने के इक-मंजिल की बैठक मे चटाई बिछे तख्त पर एकाएक उठकर बैठ गए।

आमतौर से बद्रीबाबू ठीक उसी तरह उसी तख्त पर पैर पर-पैर रखे चित लेटे रहते। उनके डर से उस कमरे की छांह नही छूता कोई। फिर भी किसी पर निगाह पडनी चाहिए। देखा नही कि पुकारा। बुलाकर पास बिठाया। कमर मे होती एक छोटी सी घडी। कहते—क्यो छोकरे घर कहां है ?

—बाप का नाम ?

—कौनसा गाँव ? ज़िला ?

—वहा बाम्हन-कायथ कितने घर हैं ?

—फी बीघा धान कितना होता है ?

—दूध क्या भाव ?

सवालो की झडी लगा देते। ऊब जाते लोग। गर्मियो मे नगे बदन रहते। कन्धे पर एक चादर। सर्दियो मे रुई की बण्डी। उन्हे देखकर शुरू मे किसी को सुबहा नहीं होता। सीधे सादे से आदमी। लेकिन कही शुरू कर दी कहानी तो खतम होने की नही। मुर्शीदकुली खाँ से लेकर लार्ड क्लाइव हालसीबगान कासिमबाजार और फिलिप फ्रासिस वारेन हेस्टिग्स, नन्दकुमार सुनने का धीरज नही रहता। रात के नौ बजे किले की तोप छूटती कि उछलकर बिस्तर पर उठ बठते। लम्बी जम्हाई लेते और चुटकी बजाकर जोर से चिल्ला पडते—जय काली कलकत्ते वाली ! फिर कमर से घडी निकालकर उसे मिला लेते।

बाइ तरफ बद्रीबाबू का बठक और दाऐं खजाचीखाना। खजाची-

खाना, यानी विधु सरकार का कमरा। अपने आगे काठ का एक ढालू बक्स लिए बैठा रहता। नाक पर झूलता हुआ चश्मा। चटाई पर उकड़ूँ बैठकर बक्स खोला करता। उस बक्स और तालियों के बक्स पर विधु सरकार की बेहद निष्ठा। उसके लिए ठनठनिया वाली मन्दिर से रोज ही फूल और तेल सिन्दूर आता। अपने हाथ से वह कुन्जी के सूराख में एक त्रिशूल बनाता। दूसरा त्रिशूल बनाता दीवार की तिजारी की कुन्जी के छेद में।

सामने ही फर्श पर बाकी रुपया के लिए बैठा बकवाला। मगर उधर विधु सरकार की नजर ही नहीं पड़ सकती।

त्रिशूल आँक लेने के बाद विधु सरकार बक्स को खोलता। खोलकर उसके अन्दर फूल रखता। उसके बाद निकाल लाता एक छोटी सी धूपदानी। यह अपनी धूपदानी थी उसकी। एक छोटे से डिब्बे से निकालता फिर धूप, कोयला और दियासलाई। दियासलाई जलाकर धूप जलाता। जलाकर पखा झलता। जब धकाधक धुआँ निकलने लगता, धुएँ से उसकी नाक, आँख, चेहरा सब ढक जाता, तब एक मजे की बात करता। आग समेत उस धूपदानी को बक्स के अन्दर डालकर धप्प से बक्स के ढक्कन को गिरा देता। झुककर बक्स पर माथा टेक देर तक नमस्कार करता और तब बक्स खोलकर अन्दर से धूपदानी को निकालता। फिर शुरू होता काम। टप्प से सामने वाले से पूछता—हाँ भई, अब कहो क्या है?

खजांची के काम में विधु सरकार जैसी निष्ठा भूतनाथ ने और किसी में नहीं देखी।

दो तरफ दो कमरे। बीच से बाहरी महल में जाने का रास्ता। रास्ते के उस तरफ बाहरी महल का आँगन। आँगन के दक्खिन पूजा-दालान। अब भी वैसा ही है वह, आस पास की और और चीजें बदल गई हैं। संगमरमर की टालियाँ सब टूट फूट गई हैं। दुर्गापूजा शायद अब भी चल रही थी। वह नहीं बन्द हुई।

एक बार नवमी पूजा के दिन एक अजीब वाकया गुजरा। सुनी हुई कहानी है। वाकया यहीं हुआ था।

पूजा हो चुकी थी। प्रसाद बँट रहा था। तसर का वस्त्र पहने बुन्दिया नौदी पुरोहितजी के लिए नवेद्य की थालियाँ गिन गिनकर उठा रही थी। प्रसाद के लिए रसोई, गोला, अस्तबल, जो जहाँ थे, वहीं से दौड़कर आये। अन्दर महल के लिए प्रसाद भेजा गया।

और भिस्तीखाना बावर्चीखाना, नहबतखाना दफ्तर गाड़ीखाना, जहाँ से छुट्टी पाकर लोग आ नहीं सके, प्रसाद भेजा गया।

दालान ड्योढ़ी, नाचघर स्कूल—सब लोग प्रसाद खा रहे थे। अचानक एक घटना घट गई।

—मैं नहीं खाऊँगा।

—क्यों भला ?

—पूजा नहीं हुई है।

—पूजा नहीं हुई—यह कैसी बात—तू है कौन ?

—मैं हूँ हाबू।

—कहाँ का हाबू ? कौन हाबू ? घर कहाँ है तेरा ?

भीड़ लग गई। सबकी ज़बान पर एक सवाल—हुआ क्या ? है कौन वह ? किसके घर का है ? मगर शक्ल से ही तो पहचान लेना चाहिए था। पगला है पगला ! किसी को भी खयाल न आया कि उसे कभी कहीं देखा है। अधमैला कपड़ा नंगा बदन पाँवों में गर्द बिखरे बाल, उदास नजर। नहीं खाया तो बला से ! खुशामद कौन करे कौन ! उँह आसन बिछाकर —आइए बैठिए—कहना पड़ेगा क्या ! भगा दो। भगा दो उसे।

मझले बाबू के कानों तक गई बात। दौड़े आये। कहते ही सिर्फ मझले बाबू हैं—हकीकत में मालिक वही हैं। तसर की धोती, तसर की चादर। कपाल पर चन्दन का टीका। गम्भीर से आदमी। साफ घुटी दाढ़ी, केवल होठों के ऊपर दो ओर को निकली ताजी नुकीली मूँछ। बदन से आती हुई इत्र की बू और उसको भी दबाती हुई निकल रही थी दूसरी घाइ तेज गन्ध। तजुर्बेकारों का पता है कि वह गन्ध बड़ी दामी होती है—कामनी इत्र की गन्ध से भी दामी। मझले बाबू को देखकर सब बाअदब हटकर खड़े हो गए। आकर वे बोले, कहाँ है—देखूँ मैं—

शक्ल उसकी देखने लायक तो न थी। कोई डर नहीं। सकपकाहट

नहीं। मझले बाबू को देखकर नमस्कार भी नहीं। टकटकी लगाए एक ओर को खड़ा था, बस।

बाबू ने पूछा—क्यों रे, प्रसाद क्यों नहीं खाता?

—जी पूजा नहीं हुई है।

—पूजा नहीं हुई है? यानी?

प्रतिमा में प्राण प्रतिष्ठा नहीं हुई।

मझले बाबू नहीं हँसे। हँसे रूपलाल पुरोहित। वह भी वहीं आकर खड़े थे। पाँवों में खड़ाऊँ। तसर की धोती। नामावली। माथे की लम्बी चुटिया में फूल बँधा। बोले—पगले की बात पर कान नहीं देते, आइए आप।

मगर मझले बाबू इतना सहज ही मानने वाले न थे। बोले—जी नहीं, नवमी के दिन अतिथि अपने यहाँ भूखा रह जाए, यह ठीक नहीं।

रूपलाल ठाकुर कुछ विस्मित हुए। पूछा—प्रतिमा में प्राण प्रतिष्ठा नहीं हुई यह तूने कैसे जाना?

पगले ने कहा—देवी ने भोग कहाँ कबूला!

रूपलाल ठाकुर अब खीझ उठे।

भीड़ में भी एक कौतूहल सा आया।

रूपलाल ठाकुर ने पूछा—तो प्राण प्रतिष्ठा होगी कैसे?

—मैं करूँगा।

—तू ब्राह्मण है?

—जी, माँ के लिए ब्राह्मण और शूद्र क्या, माँ तो जगदम्बा हैं, जगत-जननी।

पगले की इस बात पर सब चौकन्ने से हो गए। बात तो पक्की है। लगा कि मझले बाबू को कुछ मजा आ रहा है। और दिनों से आज कुछ ज्यादा मौज में थे भी। आज कैसा मीठा मीठा हँस रहे थे—अच्छा तो प्राण प्रतिष्ठा कर तू।—जब वह कहता है तो करे।

रूपलाल ठाकुर विरोध करना चाह रहे थे, मगर बेकार। मझले बाबू पर किसी की नहीं चलता।

तब तक खबर चारों तरफ फैल गई। बाहरी दालान से सारे लोग

बहुर आये। कोई कहने लगा, यह कोई छिपा हुआ साधु है। उससे बात करने को भी जी ललचाने लगा। रसोई छोडकर सारे महाराज आ जुटे। सिर्फ मझले बाबू के डर से आगे आने की किसी को हिम्मत नहीं पड रही थी। नाती पोतों के साथ एक कोने में खडा था दासू मेहतर। आज चीनी सिल्क का कोट पहने था बन्द गले का। बाल-बच्चों ने भी नये-नये कपडे पहने थे।

पगला हाबू को पूजा मण्डप में ले जाया गया। कर, प्राण प्रतिष्ठा कर।

—केले के बखल चाहिए।

—वह क्या होगा?

—लाकर दो भी तो, देखो, क्या करता हू। दक्खिन के बगीचे से लाया गया आखिर केले का बखला। मझले बाबू का हुक्म। जरा तमाशा ही देखा जाए। पूजा वूजा में मजे उडाने और मजे देखने को हो तो आना। संगमरमर की सीढी पर लोग भीड लगाकर खडे हो गए। उचक कर पगले की तरफ देखने लगे।

पगला लेकिन कतई निर्विकार। तेज हँसिये से केले के बखलों को छोटा छोटा करके काटा। उसके बाद की कहिए मत! एक एक टुकडे को उठाकर जोर जोर से क्या तो पढने और प्रतिमा पर फेंककर मारने लगा। हाथ पर आँख-नाक—सर्वांग में।

रूपलाल ठाकुर रोकने जा रहे थे, लेकिन मझले बाबू की तरफ देखकर साहस न हुआ। मझले बाबू एकटक उस पगले को देखते हुए मीठा मीठा हँस रहे थे।

और इधर पगला प्रतिमा पर बखले फेंक रहा था और फेंक रहा था। ताज्जुब क्या गजब की! अचानक हैरत में आकर लोगों ने देखा, प्रतिमा के बदन से चोट की जगहों पर लहू टपक रहा है। बखले की चोट लगी और प्रतिमा के बदन से खून टपका। लोग तो दंग रह गए।

और बीच में वह थम गया। मझले बाबू से कहा—हो गई अब प्राण प्रतिष्ठा। अब मैं प्रसाद खाऊँगा, दो।

गजब की भीड! फिर भी भीड को चीरकर ही प्रसाद लाने के लिए

आदमी गया। बात-की बात में इस उस घर इस उस मुहल्ले में खबर फैल गई। न्यटोला और ठनठनिया के दत्त परिवार से, पोस्ता व शोभा बाजार के गजबाड़ी से जोड़ा साँको व ठाकुर परिवार से, मल्लिक के यहाँ से तमाम से एक एक करके लोग आने लगे।

इधर अन्दर से प्रसाद आया। मझले बाबू का हुक्म, उसे बिठाकर भली तरह प्रसाद खिलाना होगा।

लेकिन पगला हो गया गायब।

ढूढ़, ढूढ उसे, कहाँ गया ? हर तरफ लोग दौड़े। मगर कहीं पता नहीं। पगला जो गायब हुआ सो हुआ। फिर उसे किसी ने कभी नहीं देखा।

लोगों का ताँता वैसा ही लगा था। सब पगले को देखने के लिए बेताब। प्रतिमा के बदन पर तब भी लहू था—ताजा लहू। वैसी ही भीड़ लगी रही तमाम दिन, तमाम रात—

पुराने महल के खण्डहरों से चलते हुए भूतनाथ मानो अतीत के आवर्त में डूब गया था। अचानक बंशी की आवाज से वह आपे में आया।

—मास्टर साहब।

—मुझे कह रहे हो बंशी। भूतनाथ ने मुड़कर ताका।

—छोटी माँ आपको जरा बुला रही हैं।

आज वह उम्र न रही भूतनाथ की। बहुत उम्र हो चुकी। फिर भी इस सूनी मसानपुरी में पड़े हो, उस दिन की छोटी बहू की बुलाहट को वह टाल नहीं सका। आज न तो वह घर वैसा है, न वैसी बातें हैं। पार्टीशन और पार्टीशन, पिछले दिनों का वह सिंह दरवाजा बन्द हो जाने की नौबत। जो हो, छोटी बहू की बुलाहट पर भूतनाथ चुप कैसे रहता !

—अच्छा तू जा बंशी ! मैं अभी आया। भूतनाथ उठा। बाहरमहल के बाद अन्दरमहल। अन्दरमहल घुसते ही मानो उस गिरि से सहसा मुलाकात। वह मझली मालकिन के लिए पान लगाने आई थी। आई और सौदामिनी से झगड़ पड़ी।

सौदामिनी की आवाज़ बड़ी तेज। बोली—या भगवान् नसीबा फूटा, जभी तो पराए घर समाग कूटन आइ हू।

—देख समाग का उलाहना तू मन द सौना वह दती हू मैं तेरे समाग म कीड पड़ेंगे। और उसी कीडेवाल समाग का मुदाफरोश एक दिन निमतल्ले म फकेंगे—दख लेना।

—हाँ री गिरि—समाग का उलाहना तूने दिया कि मैंन—जो समागखोर है वही समाग का जनम-जनम उलाहना दे।

—ऐं तेरी यह मजाल ! समागखोर कहेगी तू मुझे—कहती हूँ जाकर मझली मालकिन स—कहकर लकड़ी के जीन स सटासट जाने लगी कि सामन भूतनाथ को देखकर ठिठक गई—फिर जीभ काटकर घूघट काढ़ती हुई बगल होकर उसन रास्ता छोड़ दिया।

वही सूनी सीढ़ी। वही सूना अन्दरमहल। जद्दू की माँ, कहाँ गई वह ? रसोई स लगा लगा जो छोटा सा कमरा है उसी म बैठी पीसती ही चली जा रही है मसाला। धनिया हल्दी का पानी चौतरे से होकर नाल म बह रहा है। कब सूरज डूबता और कब उगता कब जाना वसन्त आता और चला जाता, उस बुढ़िया बेचारी को खाक भी खबर नहीं होती। जब हाथ म काम नहीं होता, दोपहर को तो दाल चुना करती। मूग मसूर खिसारी, चना—और भी जाने कितनी तरह की दाल। जुबान पर बात नहीं। काम कि काम। इसी व्यस्तता की फाक मे स कब जो उसकी जिन्दगी टूट गिरी, किसी को इसकी खबर नहीं। भूतनाथ सीढ़ी पर कदम रख ही रहा था कि पीछे स फिर पुकार हुइ—साले साहब !

पलटकर ताका भूतनाथ ने। नाटी पुकार रहा था। साले साहब, ज़रा जल्दी आइए।

—क्या ?

—नन्द बाबू बुला रहे है—आज गुमाइजी नहीं आय—गाना-बजाना ठप पड गया है।

नन्द बाबू की बैठक म आज शायद तबलची नहीं है। नन्द बाबू इधर तानपूरा और उधर बाना धीरे अलापता ईमन का खयाल।

तबला गोसाइजी । सम आते-आते हा हा का ऐसा शोर कि हाल खराब। घर टूट गिरने की नौबत । बहुत रात गए तक यह क्रम चलता । किसी-किसी दिन बनता गोश्त । मुर्गी का शोरबा और पराठा । रह रहकर एक एक आदमी परदे के पीछे चला जाना और जरा देर में मुह पोछते हुए लौट आना ।

मलमल का महीन कुरता पसीने से तरबतर हो जाता नन्हे बाबू का । ताल ताल पर झूमना रहना सिर । गले की मोटी सोने की पतली जजीर बिजली की रोशनी में चक् चक करती । कहते, कोई परवा नहीं मइ साले साहब, तबले का भार अब से तुम उठा लो समझे गुसाइ बेहद गरज् हो गया है—शशी, कल गुसाइ आए तो उसे जूते मारकर निकाल बाहर करना—देखता हूँ मैं

लेकिन भूतनाथ को याद आ जाती ब्रजराखाल की बात । उन लोगो मे ऐसा घुलना मिलना क्या भया, ये बाबू लोग हैं साहब की जात और हम ठहरे उनके गुलाम—गुलामो मे भी साहब बीबियो का मन बैठ सकता है ! होशियार

सो भूतनाथ ने कहा—नन्हे बाबू से जाकर कह दे शशी कि मुझे छोटी बहू ने बुलवा भेजा है। भूतनाथ सीढियाँ चढने लगा । दुतल्ले पर लम्बा बरामदा । दाइ तरफ रेलिंग । चौक सा महल । चारो तरफ रेलिंग । रेलिंग से झुककर नीचे झांकिए तो हौज और आंगन दीखता है। मॅझली चाची रसोई से खाना ले जाकर इकतल्ले के भडार मे रखती । यहाँ खडे-खडे यह भी दीखता कि जदू की मा एक सास पीसे जा रही है मसाला रोज रोज । उसी के पास जो खिडकी है, उसमे से नाचघर के फर्श का थोडा-सा हिस्सा दिखाई पडता है और वही बैठी सौदामिनी तारकेश्वर के एक बडे से हॅसिये से तरकारी काट रही है। आलू, बैंगन, कद्दू । चारो तरफ अनाज का पहाड-सा अम्बार और उसी के बीच बैठी अकेली सौदामिनी । या तो तरकारी काट रही है या पान लगा रही है। या साँझ के लिए दीयों की बत्ती बना रही है। उसके बैठने की जगह थी खिडकी के उस तरफ । काम भी करती जा रही है, बकती भी चली जा रही है। किससे बतिया रही है, कौन जाने ।

गोया, आप ही आप बके चली जा रही है—आँख गई तो तिरभुवन गया—भोला के बप्पा जभी कहत थे फूल बहू निगाह होन हुए ही तिरभुवन का चीह्न ला—सो न तो रहा भोला का बप्पा न रहा भोला—घर में मरने को पराए दरवाज़े दीया जलाती हूँ—अपन पति का घर घुपघुप अंधेरा पड़ा है।

बातें जदू की माँ के काना जाती। मगर वह न तो किसी के छह म न पाच म। मगर गिरि मुननी नहीं कि पूछ बैठती यह बकबक किससे कर रही है री सौनी—। सौदामिनी चट चुप हो जाती।

रेलिंग के सहारे बढ चला भूतनाथ। टूटी रेलिंग। गोया भूखे जानवर सी हाँ किए हो। इसके बाद दाएँ फिर बाए मुडकर यह गली वह गली पार करके उत्तर की तरफ तीन चार धाप चढकर तब बहुओ का महल। आसमान छूती लकडी की झिलमिली से घिरा। उसी के सामने दक्षिण रुख बहुओ के कमरे। छोटी बहू का कमरा सबमे आखिर म। लाए सबसे पहले पडता बडी बहू का कमरा। विधवा थी बेचारी। कहाँ स जो आइ थी इस घर की बहुए। मेम साहबो सा गोरा चिट्टा रग। दूधिया महावर। बडी बहू की उम्र हो आई थी मगर देखकर उम्र की पहचान का उपाय न था। सफेद कोर की धवधव साफ धोती।

भूतनाथ को देखकर सिधु बगल हो गई। सिधु थी बडी बहू की दाई।

अन्दर स आवाज़ आई—कौन है रे सिधु ?

भूतनाथ न सिधु को कहत सुना—जी, मास्टर साहब के साले हैं।

उसके बाद ही था मझली बहू का कमरा। पर्दा उठा हुआ था। लमहे को भूतनाथ की निगाह पडी। मझली बहू फर्श पर तकिये के सहारे लेटी गिरि के साथ बाघगोटा खेल रही थी। अपनी नजर उधर से खींचकर भूतनाथ एकबारगी आखिरी कमरे के सामने जाकर खडा हुआ।

आहट होने ही किसन तो माना दरवाजा खोल दिया। कितन बर्षों की घटना है यह लेकिन अतीत का माया अजन आज भी गोया, आँखो पर लगा हो। स्मृति के पक्षी की पीठ पर सवार होकर वर्तमान से बाहर भूतनाथ मानो अनात के अरण्य मे जा निकला है। किवाड के पल्ले लटाकर छोटी बहू न कहा कौन भूतनाथ, आ जा।

अचानक छोटी बहू ने उसके दोनो हाथ थाम लिए। तुझे एक काम कर देना पडेगा, भैया, कहकर छोटी बहू न अपनी काली काली आखें उठाकर उसे ताका। इसीलिए बुलवाया है।

—कौन सा काम ?

—यह रुपया ले—और उसने भूतनाथ की मुट्ठी म रख दिया रुपया।

—क्या लाऊ इसका ? भूतनाथ ने पूछा।

—शराब। गदन झुकाकर छोटी बहू बोली।

भूतनाथ सचमुच ही चौंक उठा। शराब ? धोखा तो नही दे रहे हैं कान !

—हाँ, शराब।

—इतनी रात को !

—हाँ हाँ। जहाँ से हो जैसे हो। उमदा शराब, खूब दामी कहने के बाद भी छोटी बहू को भरोसा न हुआ। अचानक अपने कान से हीरे का करनफूल खोलकर उसने जबदस्ती भूतनाथ की मुट्ठी मे भर दिया। बोली—उस रुपये स शायद काम न चले इसीलिए इसे भी रख ले।

—यह क्या, किया क्या तुमने बहू—भूतनाथ जसे चीख पडा। बगल से दौडी दौडी आ गइ गिरि, मझली बहू, सिन्धु बडी बहू। क्या हुआ ? क्या हुआ छोटी बहू ?

भूतनाथ खुद अप्रतिम हो उठा अपनी चीख से। छोटी बहू नही, भूतनाथ ही मारे शम के गडा सा खडा रहा। बुढापे मे आखिर यह किया क्या उसने ? यहाँ तो कही कोई नही। आज तो महज वही अकेला खडा है इस टूटे घर म। वह तो इम्प्रूवमट ट्रस्ट का ओवरसियर भूतनाथ है भूतनाथ चक्रवर्ती। मुकाम नदिया—गाव फतेहपुर—डाकखाना गाजना। इसमें राई रत्ती भूल नही। हीरे के करनफूल को देखने के लिए उसने अपनी मुट्ठी खोली। मुट्ठी म सिफ साइकिल की ताली थी। अचानक उस डर लग आया। यह घर अभिशप्त है। अच्छा ही हुआ कि इसका नाश हो रहा है। उतन ऊँचे से कूद जाने का जी होने लगा। यहाँ की जहरीली आबहवा से जितनी जल्दी भाग जाया जा सके उतना ही अच्छा। कल ही चरित्तर मण्डल काम शुरू करेगा। इस गली की

यादगार के साथ ही साथ चौधरी परिवार का इतिहास भी एकबारगी मिट जाएगा। मिट हो जाए। मिट जाना ही ठीक है।

अन्दरमहल रसोई बाहरमहल बठका दफ्तर डेवढ़ी सब पार करके भूतनाथ चटपट अपनी साइकिल उठाने जा ही रहा था कि किसी ने मानो उसके कपड़े को खींचा। वह मारे भय के चीखना ही चाहता। लेकिन गौर करके उसने लात मारी।

—हट दूर जा!

वही कुत्ता था!

बहुत दिन पहले और एक रोज इसी तरह इस घर को छोड़कर जाने में बाधा दी थी छोटी बहू ने। और आज इस कुत्ते ने रोका।

साइकिल से उस अंधेरी गली को पार करते हुए भूतनाथ को लगने लगा उसका सारा अतीत इस कुत्ते ही की तरह मानो उसे पीछे खींचना चाह रहा है। उसका अतीत इस कुत्ते जैसा ही काला रोगी मरणासन्न और धुंधला है।

उसकी साइकिल का पहिया जैसे-जैसे घूमने लगा उसकी नरगों में भूला हुआ सा उसका कभी मुखर अतीत उभर-उभर आने लगा।

कहानी

फतेहपुर से तीन कोस पैदल चलने पर पड़ता था माजन्या स्टेशन । एक दिन उसी स्टेशन से गाड़ी पर सवार होकर भूतनाथ कलकत्ते आया था ।

स्यालदा स्टेशन की शक्ल, भीड़ भाड़, शोरगुल और शहर का नज़ारा देख अवाक रह गया वह । आ कहाँ निकला ! कुलियों की छीना झपटी से बचकर किसी कदर बाहर आया । जेब में दो रुपये पड़े थे, उन्हें उसने टेंट के हवाले किया । ब्रजराखाल ने कहा था, हाशियार, जेब में रुपये न हो, वरना छूमन्तर समझो । कलकत्ता शहर आखिर तुम्हारा फतेहपुर नहीं कि—

यह तो भूतनाथ को पता था कि कलकत्ता शहर फतेहपुर नहीं है । उस बार एक नाटक की किताब लेने के लिए मल्लिका के यहाँ का तारा पदो कलकत्ते आया था । हरिश्चन्द्र नाटक । उसी से सुन रखा था । उसने कहा था, यह जो मित्तिरो का वह बड़ा सा चाल्ता पेड़ है न, उससे भी हजार हजार गुने ऊंचे हैं वहाँ के मकान, समझ गए चाचा—और देखता क्या हूँ कि उन बड़े मकानों के माथे पर खड़ी रहती औरतें मजे में रास्ता देख रही हैं—

भूषण चाचा उमरवाले आदमी । अगाध रुपये । तो भी कभी कल कत्ते नहीं गये । जाने की जरूरत भी नहीं पड़ी । चाचा ने पूछा—सिर पर घूंघट वूंघट कुछ नहीं ? तारापदा ने कहा—आखिर घूंघट क्यों लें, किस दुःख से—अरे, उन्हें ताक देख भी पाता है कोई—मैंने रास्ते पर

से देखा तो इत्ती-सी ता लग रहा थी पाँचवीं उगली जैसी—

भूतण चाचा बोले—क्यों भइ सुना है, कलकत्ते म आजकल ब्याहता औरतें सिंदूर नहीं पहनतीं—घूघट उघारे खसम के साथ बग्गी पर हवा खारी को निकलती हैं ससुर-जेठ के सामने पति से बातें करती हैं ?

—झूठ सरासर झूठ है चाचा—तारापदा सिर हिलाने लगा। ऐसा नहीं हो सकता मैं तो अपनी आँखों सब-कुछ देख आया। समझ लो कि सुबह गाडी से उतरा और फिर साँझ को आनेवाली गाडी पकडी—कलकत्ते का कुछ भी नहीं छोडा चाचा सब देखा—रानाघाट से खरीदकर ले गया था डबलरोटी और माजन्दिया के रसगुल्ले—भर पेट खा लिया और एक-एक कर सब कुछ देखा। घोडे की टाम देखी वह जोर की चलती है कि पूछो मत चाचा! सामने से गुजरती है तो छाती धडकने लगती है।

—क्या छाती क्या धडकने लगती है ?—भूतनाथ ने पूछा था।

जवाब लेकिन चाचा ने दिया था—तू चुप भी रह मुतू बेवकूफ जैसी बातें न कर लोग हँसेंगे।

सच ही भूतनाथ फिर न बोला। सुनता रहा।

तारापदा ने कहा था, जी में आता है चाचा इस मुतू को एक बार वहाँ के रास्ते पर छोड दूँ —यकीन मानिए यह जरूर फुक्का फाडकर रो पडेगा—

भूतण चाचा ने भी तजुर्बेकार जैसा कहा था—और क्या यह भी क्या फतेपुर का गाजन का मेला है कि रात भी हो गइ तो परवाह नहीं चूडा मुरमुरा खाकर हलवाई की दुकान पर ही पड लिए।

तारापदा की जुबानी सुनकर कलकत्ते के नाम से छुटपन से ही रोमाच सा आता था भूतनाथ को। एक रोज वह मितिरों के चालता पेड की फुनगी पर तक चढ गया था। उसस भी हजार गुना बडा। वह ऊँचाई क्या थी—समझना मुश्किल। फिर भी मन दूर-दूर तक निगाह दौडाए। पश्चिम की तरफ ताड दिखाई पडे। पत्तों के बीच-बीच से दिखाई दिए सब। आसमान। आसमान और आसमान। चारों तरफ फैला आसमान। मौत का ९७ साल के लिए धमाकों की जमात उड-

कर उधर से इधर को आती। शहर की तरफ न। माजदिया से भी दूर, बहुत दूर, कितने शहर, कितने फतेहपुर से गाँव पार करके तब कलकत्ता। वहाँ जोरों से चलती है घोड़ोंवाली ट्रामगाड़ी—सामने से गुजर जाती है तो छाती धड़कने लगती है। (क्यों धड़कने लगती है, पता नहीं) मिसिरों के कालता गाछ से भी हजार गुने ऊँचे हैं वहाँ के मकान। उनके माथे पर लोग दीखते हैं पाँचवीं उंगली-से!

यही सब सोचते सोचते भूतनाथ पेड़ से उतर पड़ा।

और एक दिन का वाकया। भूतनाथ तब कुछ बड़ा हो चुका था। गंज अस्पताल के बड़े डॉक्टर का लड़का ननी स्कूल में दाखिल हुआ। खूबसूरत सा लड़का। जैसा ही गोरा रंग, वैसी ही काली काली आँखें बड़े-बड़े बाल। आगे चलकर कई बार भूतनाथ ने सोचा ननी गोया लड़का नहीं। घनिष्ठता हो जाने के बाद भी ननी के हाथ से हाथ छू जाता कहीं, तो कैसा तो सिहर उठता भूतनाथ। स्कूल से मीलों चल कर घर आते वक्त तमाम रास्ता वह ननी की ही बात सोचता। कभी-कभी जी में आता ननी उसकी बहन हुआ होता तो अच्छा था। फिर तो दोनों जन साथ ही रहते, एक ही बिछावन पर सोते। कितनी बार छुट्टियों में भी भूतनाथ उतनी लम्बी राह पैदल चलकर स्कूल गया। जाकर छिपा छिपा अस्पताल के आस-पास मँडराता रहा। शायद एक निगाह ननी का दरस पाए। शरम भी आती। कहीं ननी की नजर पड़ जाए उस पर! कहीं वह पूछ बैठे, क्यों भूतनाथ, यहाँ क्यों, तो क्या जवाब देगा वह?

आखिर ननी से तो यह कहा नहीं जा सकता था कि उसी को देखने के लिए आया है। अपनी एक किताब उसने ननी की किताबों में मिला दी थी चुपके से। कहीं इसी बहाने छुट्टी के बाद उससे दो बातें करने का मौका मिल जाए! और वह ननी उसके स्कूल में रहा भी कितने दिन! फिर भी कितनी ही बातें होतीं। उसके पिता की बदली कितनी ही जगह हुई। कितने स्कूलों में, कितने लड़कों से किस्से।

वही ननी एक दिन चला गया। चला गया उसके सदा-सदा के सपनों का शहर—कलकत्ता। उसके जाने के पहले दिन कैसा खराब हो गया

से देखा तो इत्ती-सी तो लग रही थी, पाँचवी उँगली जसी—

भूषण चाचा बोले—क्यो भई, सुना है, कलकत्ते म आजकल ब्याहता औरतें सिंदूर नही पहनती—घूघट उघारे खसम के साथ बग्गी पर हवा खोरी को निकलती हैं, ससुर-जेठ के सामने पति से बातें करती हैं ?

—झूठ, सरासर झूठ है चाचा—तारापद्दो सिर हिलाने लगा। ऐसा नही हो सकता मैं तो अपनी आँखो सब-कुछ देख आया। समझ लो कि सुबह गाडी से उतरा और फिर साँझ का आनेवाली गाडी पकडी—कलकत्ते का कुछ भी नही छोडा चाचा, सब देखा—रानाघाट से खरीदकर ले गया था डबलरोटी और माजन्दिया के रसगुल्ले—भर पेट खा लिया और एक एक कर सब कुछ देखा। घोडे की ट्राम देखी, वह जोर की चलती है कि पूछो मत चाचा! सामने से गुजरती है तो छाती धडकने लगती है।

—क्यो, छाती क्या धडकने लगती है ?—भूतनाथ ने पूछा था।

जवाब लेकिन चाचा ने दिया था—तू चुप भी रह भुतू बेवकूफ जैसी बातें न कर लोग हँसेंगे।

सच ही भूतनाथ फिर न बोला। सुनता रहा।

तारापद्दो ने कहा था, जी म आता है चाचा इस भुतू को एक बार वहाँ के रास्ते पर छोड दूँ—यकीन मानिए, यह जरूर फुक्का फाडकर रो पडेगा—

भूषण चाचा न भी तजुर्बेकार जसा कहा था—और क्या यह भी क्या श्रीनाथपुर के गाजन का मला है कि रात भी हो गई तो परवाह नहीं चूडा मुरमुरा खाकर हलवाई की दुकान पर ही पड दिए।

तारापद्दो की जुबानी सुनकर कलकत्ते क नाम से छुटपन से ही रोमाच हो आता था भूतनाथ को। एक रोज वह मित्तिरो के चालता पेड की फुनगी पर तक चढ गया था। उससे भी हजार गुना बडा। वह ऊँचाई क्या होगी—समझना मुश्किल। फिर भी उसने दूर-दूर तक निगाह दौडाई। पश्चिम की तरफ तो पेड दिखाई पडे। पेडो क बीच-बीच से दिखाई दिए सन। आसमान। आसमान और आसमान। चारो तरफ फैला आसमान। साँझ को फल खाने क लिए चमगादडो की जमात उड

धर उधर से इधर को आती। शहर की तरफ म। मोजदिया स भी दूर, बहुत दूर, कितने शहर, कितने फतेहपुर से गाँव पार करके तब कलकत्ता। वहाँ ज़ोरो से चलती है घोडोंवाली ट्रामगाडी—सामन से गुजर जाती है तो छाती धडकने लगती है। (क्यो धडकन लगती है पता नही) मित्तिरो क चालता गाछ से भी हजार गुने ऊँचे हैं वहाँ क मकान। उनक माथे पर लोग दीखते हैं पाँचवी उगली-स !

यही सब सोचते सोचते भूतनाथ पेड से उतर पडा।

और एक दिन का वाक्या। भूतनाथ तब कुछ बडा हो चुका था। गज अस्पताल के बडे डॉक्टर का लडका ननी स्कूल म दाखिल हुआ। खूबसूरत सा लडका। जसा ही गोरा रग, वसी ही काली काली आँखें, बडे-बडे बाल। आगे चलकर कई बार भूतनाथ न सोचा, ननी गोया लडका नही। घनिष्ठता हो जाने के बाद भी ननी क हाथ से हाथ छू जाता कही तो कैसा तो सिहर उठता भूतनाथ। स्कूल से मीलो चल कर घर आत वक्त तमाम रास्ता वह ननी की ही बात सोचता। कभी-कभी जी मे आता ननी उसकी बहन हुआ होना तो अच्छा था। फिर तो दोनो जने साथ ही रहते, एक ही बिछावन पर सोत। कितनी बार छुट्टियो म भी भूतनाथ उतनी लम्बी राह पदल चलकर स्कूल गया। जाकर छिपा छिपा अस्पताल के आस पास मडराता रहा। शायद एक निगाह ननी को दख पाए। शरम भी आती। कही ननी की नजर पड जाए उस पर ! कही वह पूछ बठे, क्या भूतनाथ, यहाँ क्यो, तो क्या जवाब देगा वह ?

आखिर ननी का तो यह कहा नही जा सकता था कि उसी का दशन के लिए आया है। अपनी एक किताब उसन ननी की किताबो म मिला दी थी चुपक स। कही इसी बहाने छुट्टी के बाद उसम दो बातें करने का मौका मिल जाए ! और वह ननी उसक स्कूल म रहा भी कितने दिन ! फिर भी कितनी ही बातें होतीं। उसके पिता का बदली कितनी ही जगह हुई। कितन स्कूलो क, कितन लडको क किस्म।

वही ननी एक दिन चला गया। चला गया उसके सपना-सदा के सपना का शहर—कलकत्ता। उसक जाने क पहल दिन कैसा खराब हो गया

था जी भूतनाथ का ! ननी को खुशी हुई थी कि उसके बिना कलकत्ते जाएँगे। लेकिन बड़ी हिम्मत बटोरकर भूतनाथ ने पूछा था—तुझे बड़ी तकलीफ हो रही है ननी क्यों ?

—क्या, तकलीफ क्यों न होगी ?

यह बात ननी के दिमाग ही म न आई कि कलकत्ता जाने म तकलीफ भी क्या हो सकती है ! लेकिन भूतनाथ के जी में आया था, उसे जसी तकलीफ हो रहा है वैसी ही तकलीफ ननी को भी होती, तो अच्छा था। ननी के जी म तकलीफ होना क्यों उचित है, शरम से इस बात को वह समझाकर न कह सका। उस रोज भूतनाथ की उस तकलीफ को ननी समझ नहीं सका। न समझ सकने की ही बात थी। उसने कितने तो शहर देखे। कितना बड़ा आदमी। भूतनाथ जसे कितने लोग उसके जीवन म आएँगे जाएँगे खूब याद है, उसके जाने के बाद, खटरा दह के पास पड के नीचे किस बेतरह रोया था भूतनाथ !

एक दिन ननी का चिट्ठी आई। चिट्ठी आई खास कलकत्ता से। ज़िन्दगी म चिट्ठी उसे यही पहला बार मिली। उस चिट्ठी को पढकर उस दिन उसे जसा आनन्द मिला वसा आनन्द फिर किसी दिन किसी चिट्ठी को पढकर नहीं मिला। खत को जाने कितनी बार पढा उसने। दिनो तक उसे तकिए के नीचे रखकर सोता रहा। कुरते के नीचे उसने उसे कलेजे के ऊपर रखा। मानो कागज के उस छोटे से टुकडे म ननी के हाथ का स्पर्श हो। लेकिन लिखा ही एसा क्या था उसने ! यो कहिए तो कुछ भी नहीं लिखा था।

प्रिय भूतनाथ

पिछले सनीचर को हम लोग यहाँ पहुँच गए। कलकत्ता अच्छा खासा शहर इतना अच्छा शहर कि कह नहीं सकता। आने के बाद से पिताजी के साथ घूम ही रहा हूँ। बडे बडे मकान, चौडे चौडे रास्ते। बडे मजे हैं। तुम लोगों की याद आती है। लिखना, तुम कैसे हो। ऊपर के पते पर पत्र देना।

उसका जवाब लिखने म भूतनाथ की दस कापियों का कागज बर्बाद हो गया। जवाब लेकिन तो भी लिखा न जा सका। पसन्द ही न आया।

लिखना और काट डालना। लाज लगती। उस दिन कलकत्ते से ननी का खत आना ही उसे जिन्दगी की सबसे बड़ी घटना मालूम हुई थी। उसका जवाब कलकत्ता भेजना है। यह बात उसके लिए अचरज की थी। यकीन नहीं आने लायक। अन्त में किसी तरह जवाब लिखकर भेजा था उसने। फिर जिन्दगी भर उसका जवाब नहीं आया। उसके जीवन से ननी तो सदा के लिए खो ही गया। मगर कलकत्ते के रोब का उसके मन से कभी कोई नहीं मेट सका।

इसके बाद एक घटना और घटी। भूतनाथ की उम्र बारह या तेरह की रही होगी और राधा की थी ग्यारह। राधा की शादी ठीक होने लगी। कलकत्ते से उसे देखने के लिए लोग आये। गजब का रोमांच। राधा का रोमांच हुआ या नहीं, भूतनाथ को मालूम न हो सका। अगर उसे हुआ भी हो तो भी भूतनाथ को उससे हजार गुना हुआ था। राधा! और राधा की ससुराल होगी कलकत्ते में! रश्क हुआ उसे। गुस्सा भी हुआ। कई दिन तक तो उसने राधा से भेंट ही न की। बात तक न बोला।

एक दिन चुन्नटवाली चादर डाले, चमकते पम्प शू पहन कलकत्ता से कुछ लोग गाँव में आये। रात भर रहे। खूब खाया। नन्द काका ने सबको डाब का पानी पिलाया, पोखर की मछली, गाय का घी, श्रीनाथ-पुर के बिमुन हलवाई के यहाँ का रसगुल्ला और बनरनी चावल का भात खिलाया।

रिश्ता पक्का हो गया। एक दिन दुलहा बनकर पालकी पर आया ब्रजराखाल। वह राधा को ब्याहने के लिए कलकत्ते से आया। राधा को अपना दुलहा पसन्द आया या नहीं पता नहीं, मगर भूतनाथ को पसन्द नहीं आया। मूँछ नहीं! यह कैसा दूल्हा! जितने भी दूल्हे गाँव में आये, सबकी मूछ थी। राधा की सहेली हरिदासी के दूल्हे को मूछ थी। भूषण चाचा की बेटी चानन्दा का दूल्हा आज भी आता है, उसके भी मूछ है। भूतनाथ को उस उमर में ऐसा लगता था कि राधा के दूल्हे को मूछ होती तो खूब फबती! आज बचपन यह सोचकर भी हँसी आती है। दूल्हे को मूछ न होने का जो गम भूतनाथ को हुआ, वह इस बात पर जाता रहा

कि उसकी ससुराल कलकत्ते में हुई।

कोहबर में दूल्हे के साथ भूतनाथ काफी रात तक बैठा था। गंगा चाची ने उसका परिचय कराया था—इसे देख रहे हो न ? इस दिन से तुम्हारा साला है बेटा—

मल्लिक के घर की जनाना वाले उठी थीं—वड हैं। तो फिर हम लोगों में क्यों दुबक बैठे हैं ? भूतू भया, बाहर जाओ न तुम।

सब के सब हँस पड़े थे।

शरम से भूतनाथ वहाँ और न बैठ सका। चुपके से उठकर चला आना पड़ा था उसे। ब्रजराखाल से बातें करने की उसे बड़ी ख्वाहिश थी। ख्वाहिश थी कि कलकत्ते के बारे में उससे पूछे, पूछे कि वहाँ अस्पताल के डाक्टर साहब के लड़के ननी को वह जानता है या नहीं—आदि इत्यादि। पर मन की मन ही रही।

याद है सुबह कुएँ के पास शरीफे के पेड़ की आड़ में खड़े होकर भूतनाथ ने सुना कि राधा मां से कह रही है—माँ, भूतू भया मेरे साथ चलने को कह रहे थे।

—कहाँ ?—माँ अवाक हो गई थी।

—मेरे साथ।

—तेरी ससुराल ? क्या ?

—सो नहीं जानती। कह रहे थे लेकिन।

—पागल।—कहकर वह हँस पड़ी थी। छि, क्या सोचा होगा उन्होंने ! कौन जानता था कि राधा उनसे कह देगी ! बड़ी बेवकूफ है।

बाद में भूतनाथ को पता चला राधा की ससुराल कलकत्ते में नहीं है। वहाँ से बहुत दूर कामारपुकुर में है। कामारपुकुर कहाँ है, कौन जाने ! राधा वहीं रहती है। ब्रजराखाल कलकत्ते में नौकरी करता है। हर सनीचर को घर जाता है।

पहली बार जब राधा मैके लौटी तो पहचानना मुश्किल !

वह ठठाकर हँस पड़ी—भला भूतनाथ भया किस कदर मेरी तरफ ताक रहे हैं देखो जरा—

मगर भूतनाथ कुछ और ही देख रहा था। भला इतने दिनों में यह